IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

आदिवासी एक उपेक्षित समाज

[1]वैशाली काशिनाथ गायकवाड़

[1]शोधार्थी, (हिंदी)

[1]डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर मराठवाडा विश्वविद्यालय, औरंगाबाद, महाराष्ट्र. पता

भारत विविधतापूर्ण देश है। देश में भिन्न -भिन्न जाती, धर्म के लोग एकत्रित रहते है। उनकी संस्कृति, सभ्यता, आचार - विचार, रहन -सहन, खान -पान, वेशभूषा, भाषा और बोलियों में भी अंतर दिखाई देता है। इन सबके बावजूद देश में एकरूपता है। मनुष्य समाज में अपना स्थान, दर्जा बनाए हुए है। परतुं कुछ जनजातियाँ ऐसे है जो आज भी पिछड़े हुए है। और समाज से दूर दुर्गम भाग में रह रहे है। उन्होंने अपने जीवन में कठिनाई परेशानी, दुःख और पीड़ा ही देखी है । वो जनजातियाँ है, विमुक्त, घुमंतू अर्ध्य घुमंतू आदि। अंग्रेजों के शासन काल में अन्य भारतीय, देशभक्तों के साथ इन जनजातियों ने भी देश को स्वंतत्रता प्राप्त करने के लिए अपना योगदान दिया था । अपने देश की सभ्यता, संस्कृति को बनाए रखने के लिए कार्य किया था परतुं इतिहास में कही भी इसका जिक्र नहीं है। इन जनजातियों ने जिस जज्बे के साथ देश की रक्षा की है, यह सराहनीय है।

राकेश कुमार ने **'जो इतिहास में नहीं है'** इस उपन्यास में अंग्रेज और ईस्ट इण्डिया कंपनी के शोषक और दमन से त्रस्त झारखण्ड के आदिवासी संताल बहादुरों की मुक्ति संग्राम की सशक्त महागाथा को प्रस्तुत किया है। वे कहते है, सन 1857 से पूर्व हुए इन आंदोलनों के नायक वे लोग है जिन के जल, जंगल और जमीन के नैसर्गिक अधिकारों से उन्हें लगातार बेदखल किया जाता रहा है। अंग्रेजी हुकूमत जमींदार और साहूकार के त्रिगुट ने उन्हें अधिकार से वंचित कर रखा था । ऐसे में सिदो, बिरसा,मुण्डा जैसे लड़ाकों की अगुआई में संताल क्रांति 'हूल' का नगाड़ा बज उठता है। इस क्रांति को मात्र विद्रोह नहीं कहा जा सकता वरन अपनी अस्मिता स्वायजता और संस्कृति की रक्षा के लिए यह उनका संघर्ष है। इसमें उन्हें पराजय और यातनाएँ ही बार -बार मिलती है, फिर भी उनकी अपराजेय जिजीविषा अपनी आजादी के लिए संघर्षरत रहती है। इस संघर्ष में सभी जनजातियों का सहभाग था। इसीलिए परेशान होकर अंग्रेजों ने इन जनजातियों को सजा के तौर पर क्रिमिनल ट्राइब्स घोषित कर दिया। जिसे हिंदी में अपराधिक जनजाति कहाँ जाता है। अर्थात जन्म से ही अपराधी । देश को आजादी मिलने के बाद भी इन जनजातियों पर लगा क़ानून नहीं मिटा। पांच साल बाद वल्लभ भाई पटेल जी ने अपने प्रयासों से जनजातियों को मुक्त किया। परतुं भारत में जिस प्रकार की जातिव्यवस्था है, उसके चलते आज भी इन जनजातियों को अपराधी के दृष्टी से ही देखा जाता है। आज भी उनकी स्थिति पशुओं के समान ही है।

डॉ. शिवतोष दास अपनी किताब भारत की जनजातियाँ में लिखते है की, **"नर विज्ञान और रक्त विज्ञान द्वारा जो भी आंकड़े प्राप्त हुए है उनसे केवल यह पता चला है की वे विशुध्द जातियाँ नहीं है, अन्य जातियों के मिश्रण से बनी है और उनमें 'बी' रक्त का बाहुल्य है इसके अतिरिक्त उनकी शारीरिक बनावट और शारीरिक रक्त का कोई दोष नहीं है, क्योंकि उनकी शारीरिक बनावट और शारीरिक रक्त में अन्य जातियों की अपेक्षा कोई विशेष अंतर नहीं है"।1**

यहाँ पर लेखक कहना चाहते है, उनमें और हम में शारीरिक बनावट और रक्त में कोई अंतर नहीं है। वे भी तो हमारी तरह मनुष्य ही है फिर उनके साथ ऐसा बर्ताव क्यों होता है।

"हम सब एक लकड़ी नहीं, बँधे हुए गठ्ठर हैं। तोड़ने से न टूटेंगे। चित्तोड़ से लेकर झाँसी की रानी का साथ निभाने की सजाएँ भोगेंगे"।2

उपरोक्त पक्तियां 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास कि है । ये जनजातियाँ देशभक्त के रूप में ही कार्य करते आए हैं । देश के प्रति बलिदान की भावना ही उनके अंदर दिखाई देती है। और एकता में विश्वास रखते हैं **मैत्रेयी पुष्पा** बताना चाहती हैं की देश के प्रति मर मिटने वाले ये जनजातियाँ आज गुलामों से भरी जिंदगी जी रहे है। आजादी प्राप्त करने के लिए जो लड़े उसकी सजा उन्हें समाज के माध्यम से मिल रही हैं ।

मैत्रेयी पुष्पा अपने उपन्यास '**अल्मा कबूतरी**' में लिखती है की "**कभी- कभी सड़कों, गलियों में घूमते या अखबारों की अपराध -सुखियों में दिखाई देने वाले कंजर, साँझी, नट, मदारी, सँपेरे, पारदी, हाबुडे, बनजारे, बावरिया, कबूतरे न जाने कितनी जनजातियाँ है जो सभ्य समाज के हाशियों पर डेरा लगाए सदियाँ गुजार देती हैं। हमारा उनसे चौकन्ना संबंध सिर्फ कामचलाऊ ही बना रहता है। उनके लिए हम हैं कज्जा और 'दिकू' यानी सभ्य -सभ्रांत, 'परदेसी' उनका इस्तेमाल करने वाले शोषक -उनके अपराधों से डरते हुए, मगर उन्हें अपराधी बनाए रखने के आग्रही। हमारे लिए वे ऐसे छापामार गुरिल्ले हैं जो हमारी असावधानियों की दरारों से झपट्टा मारकर वापस अपनी दुनिया में जा छिपते हैं"।** 3

यहाँ लेखिका यही कहना चाहती हैं की, समाज ही है जो उन्हें अपराधी के रूप में देखता है। उनका शोषण करने वाले भी हम ही है। समाज में तो वे अपना काम कर रहे है पर मनुष्य की सोच ही यही है की किसी को गलत मान लिया जाए तो वो गलत ही रहता है। हर मनुष्य समाज में रहते हुए समाज के नियमों का पालन करता है। चोरी, डकैती, हिंसा आदि को समाज में गलत माना जाता है। परतुं इन जनतातियों ने ऐसा कोई भी अपराध नहीं किया है फिर भी समाज का उनकी ओर देखने का दृष्टिकोण अपराधी के रूप में ही है।

ये जनजातियाँ भारत के हर प्रान्त में फैले हुए है इनका व्यवसाय ना कृषि उद्योग है, ना व्यापार करना ये तो बनारस, जौनपुर, कानपुर जैसे शहरों में नौंटकी करना, मेले में सर्कस करना, किसिम -किसिम के खेल -तमाशे, कठपुतली का नाच आदि व्यवसाय करते है इनकी ना अपनी जमीन होती है न दूसरों के खेतो में काम करते है।

"हम लोग न खेतों के मालिक न मजूर सो गोह खाते -खाते होंठ चिपचिया गए हैं। देखें तो धरती मैया कैसी -कैसी चीजें देती है? जमीन में हमारा हिस्सा नहीं"।4

'**अल्मा कबूतरी**' उपन्यास में लेखिका **मैत्रेयी पुष्पा** बताना चाहती है की, इन जनजातियों की ऐसी दुर्दशा है की वे जमीन भी नहीं खरीद सकते। बल्कि उन्हें छोटे -मोटे काम करके ही अपना गुजारा करना पड़ता है।

"बच्चे गाँव से दूर पड़े घूरों को कुरेद आए। कुछ चिथड़े उखाड़ लाए। उन्होंने चिथड़े घर के भीतर माँ -काकियों के पास फेक दिए. नहीं देखा की वे चिथड़े गंदगी में लिथड़े है या माहवारी..... फायदा भी क्या था दूसरा सहारा न था। माँ -काकियों के नंगे बदन रह -रहकर आँखों में छा जाते"।5

'**अल्मा कबूतरी**' उपन्यास के माध्यम से लेखिका बताना चाहती है की, भूख लगने पर बच्चों के पास गंदगी में भरा हुआ जानवर का मांस खाने के सिवा दूसरा रास्ता नहीं है। क्योंकि ये समाज आर्थिक स्थिति से कमजोर होते है। दारिद्य के कारण उन्हें कभी -कभी भूखा भी रहना पड़ता है और कभी -कभी जंगलों में मिलने वाले जानवरों का शिकार करके अपना पेट पालना पड़ता है। उनकी स्थिति जानवरों से भी बत्तर हैं ।

"न दिन है, न रात, दोनों की दहलीज पर संथाल परगना का पूरा नंगा इलाका घायल गुरते सूअर की तरह पड़ा है। नंगी, अधनंगी, पहाड़ियाँ जहाँ -जहाँ खडे, शाल, महुए, खजूर और ताड़ के पेड़ झाड़ियाँ, बलुई बंजर धरती, सूखती नदियाँ, सूखते कुएँ, तालाब, भयंकर पोखरियाँ खादें, जहाँ -तहाँ सोये पड़े मुर्दो से लोग"। 6

लेखक **फिरोज खान** अपने उपन्यासों में कोयला खदान में काम करने वाले निम्न वर्ग के मनुष्यों की दयनीय स्थिति के बारे में बताना चाहते है वे कहते है की, दिन हो या रात इतनी मेहनत करने पर भी उनके हाथ खाली ही है। भूखा ही थककर एक मुर्दे के समान सोते है।

आजादी के बाद देश में कई ऐसे क़ानून बन गए जिसके कारण वन जातियाँ रास्ते पर आ गए। बावरिया जनजाति का मुख्य व्यवसाय शिकार करना है परतुं सरकार ने 'वन अधिनियम' और 'वन्यजीव संरक्षण अधिनियम' से इनका व्यवसाय बंद होकर शिकार करना एक अपराध हो गया ।

21 वी सदी में व्यक्ति, समाज, देश सभी का विकास हुआ है। परतुं ये समाज आज भी वहीं है जहाँ पहले था। शिक्षा का विकास इन जनजातियों में नहीं होने के कारण समाज में अंधश्रद्धा जैसी समस्या दिखाई देती है। लोग आज भी वहीं पारंपरिक व्यवसाय करते दिखाई देते है। इस वजह से उनका विकास नहीं हो रहा है। जिस तरह भूमंडलीकरण, आधुनिकीकरण से विश्व में नई नई चुनौती आ रही है ,जीवन में हर मोड़ पर हार जीत हो रही है। ऐसे में इस समाज का विकास होना जरूरी है उन्हें भी समय के साथ आगे बढ़ना होगा। ये तब ही मुमकिन है ज़ब समाज में शिक्षा का प्रचार -प्रसार होगा। समाज शिक्षित बनेगा तो अपने हक के बारे में जान सकेगा, अपनी अस्मिता कि पहचान बना पाएगा, सही -गलत कि पहचान कर सकेगा।

लेखिका रमणिका गुप्ता जी ने हाशिये की वैचारिकी किताब में 'जनजातीय अस्मिता के प्रश्न' पर अपना शोध आलेख प्रस्तुत किया है। इसमें लेखिका बताना चाहती है की इन जनजातियों का विकास होने के लिए सरकार को कुछ प्रश्नों पर विचार करना जरुरी है वे प्रश्न है –

1. घुमंतू व विमुक्त जनजातियों के मूल नागरिक और संवैधानिक अधिकारों की सुरक्षा एवं उन पर लगे क्षेत्रीय प्रतिबंध को हटाना ताकि उनका इंडिजिनस /आदिवासी /ट्राइबल होने का अधिकार व सुविधा उन्हें देश में कहीं पर रहने या जाने पर मिल सके। यही नियम इंडिजिनस /आदिवासी /ट्राइबल जनों पर भी लागू हो जो आज रोजगार की खोज में दिल्ली, असम या अन्य क्षेत्रों में जाते है ताकि वे अपने मिलने वाले अधिकारों से वंचित न हो सके।
2. इंडिजिनस /आदिवासी /ट्राइबल जनों के विकास विषयों और कार्यवाहियों में निर्णय लेने की प्रक्रिया में औरतों की भागीदारी हेतु उनकी सशक्तिकरण और संबध्द निकार्यो में लैंगिक समानता व बराबरी सुनिश्चित हो। इंडिजिनस /ट्राइबल के विकास हेतु विशेष योजनाएँ शुरू हो।
3. इंडिजिनस /आदिवासी /ट्राइबल जनों की शिक्षा उनकी मातृभाषा में हो एवं आदिवासी भाषा, संस्कृति, इतिहास और जीवनशैली -परक साहित्य के निर्माण को प्रोत्साहन और उनका पाठ्य -पुस्तकों और पाठ्यक्रम में समावेश।
4. भारतीय संस्कृति और इतिहास के निर्माण में इंडिजिनस /आदिवासी /ट्राइबल जनों के योगदान को मान्यता एवं स्वीकृति देना।
5. इंडिजिनस /आदिवासी /ट्राइबल जनों के लिए वित्तीय, शैक्षिक व प्रशासनिक अधिकारों समेत स्वशासन व स्वायत्त शासन की व्यवस्था।
6. सरकारी जनगणनाओं एवं दूसरे अभिलेखों में इंडिजिनस /आदिवासी /ट्राइबल जन अलग धर्म के रूप में दर्ज हो।
7. इंडिजिनस /आदिवासी /ट्राइबल जनों पर भूमंडलीकरण के दुष्प्रभावों के विरुद्ध संघर्ष।
7. इंडिजिनस /आदिवासी /ट्राइबल जनों की अस्मिता, आत्मविश्वास और आत्म-सम्मान का निर्माण वनवासी शब्द का नकार एवं संविधान में से जनजाति शब्द हटाकर आदिवासी /इंडिजिनस शब्द का प्रयोग।
8. उपेक्षित आदिम जनजातियों की उन्नति और विकास हेतु विशेष योजनाएँ, अध्ययन एवं शोध कराना।7

ये कुछ सिफारशें है जो इन जनजातियों के अस्मिता की दृष्टी से महत्वपूर्ण बिंदु है। अगर इस प्रकार का कार्य हुआ तो इन जनजातियों के अस्तित्व पर जो प्रश्न चिन्ह लगा है। वो मिट जाएगा और अन्य जाती, धर्म के लोगों के साथ इस समाज का भी विकास होगा।

देश में 2011 के जनगणनानुसार इनकी लोकसंख्या पंधरा करोड़ थीं परन्तु आज ये बीस करोड़ से भी ज्यादा है। इतने लोग है जो समाज में आज भी अपनी अस्मिता खोये हुए ग़रीबी में जी रहे है ऐसे में इन प्रश्नों पर गंभीरपूर्वक विचार करके वो मान्य होना जरूरी है। जिससे ये जनजाति समाज में सम्मानपूर्वक अपना जीवन यापन कर पाएँगे।

संदर्भ सूची

1. शिवतोष दास, भारत की जन जातियाँ, पृ. सं. 174
2. मैत्रेयी पुष्पा, अल्मा कबूतरी, पृ. सं. 175
3. वहीं, पृ. सं. 76
4. वहीं, पृ. सं. 58
5. वहीं, पृ. सं. 47
6. फिरोज खान, आदिवासी जीवन की हकीकत उपन्यासों के आईने में, पृ. सं. 186
7. संचालक उमा शंकर चौधरी, हाशिये की वैचारिकी, पृ. सं. 318- 319